भक्ति

श्री गुरुं परमानन्दं वन्दे स्वानन्द विग्रहम् ।
यस्य सान्निध्य मात्रेण चिदानन्दायते तनुः ॥

यह जीवात्मा जब अपने निजानन्द में स्थित होता है तो उस अवस्था में जिस आनन्द का यह अनुभव करता है उसके लिये वेद कहता है कि वह (अप्रमेय) और अचिन्त्य है और जब वह अपने केन्द्र स्थान से भटक जाता है तो उसकी दशा प्रत्यक्ष में अत्यन्त शोचनीय होती है उसको किसी प्रकार की शान्ति नहीं मिलती, मृग-तृष्णा की भांति जिस जड़ पदार्थ की बाह्य चमक दमक पर लालायित होकर और अपने उत्साह का संयम करके वह उसको पकड़ने दौड़ता है वहां ही से उसे क्षण भर में निराशा और दुःख का प्रसाद मिलता है क्योंकि जो भी कर्म्म वह अपने मन के वशीभूत होकर करता है उसका फल सिवाय दुःख के और क्या हो सकता है ? यह साधारण बात है कि इसका प्रत्येक मनुष्य को अनुभव है कि मन के अनुकूल काम को चिन्तन करने में, उसके अनुकूल कर्म्म करने में और अन्त में उसका फल भोगने में दुःख ही दुःख है । मनका क्या है इसकी अद्भुत् शक्ति है यह एक क्षण में जगत् की रचना करता है इसकी गति के साथ विद्युत की गति का कुछ भी मुकाबला नहीं हो सकता अब इसमें विचारने की बात यह है कि इतनी तीव्र गति होते हुए इसकी गति भी नीचे को है । ऊपरको नहीं है उसके लिए कबीर जी ने एक दोहे के एक पाद में कितना उचित और उत्तम कहा है :–

कोटि करम पल में करे, यह मन विषया स्वाद ।

ऐसे मनके चक्र से दुःखित और पीड़ित होता हुआ यह आत्मा अहर्निश अपने निजानन्द की तरफ जाने का उद्योग व प्रयत्न करता रहता है ।

संसार के अनादि चक्र के साथ साथ जीवों का यह प्रयत्न अनादि है और इसी प्रकार बना रहता है । जितने धर्म्म तुम्हारे देखने और सुनने में आए हैं वह सब ही उसी आनन्द की डिम डिमी पीटते हैं । प्रत्येक धार्मिक आचार्य यही घोषणा करता है कि मेरे पीछे चलने से तुम अपने निज घर में चले जावोगे । इस रहस्य का रूप पृथक् पृथक् हो सकता है । परन्तु बात वही है आप (चाहें) जीवात्मा का अपने पिता परमात्मा से जा मिलना समझें या अपने आपका आपे में मिल जाना समझें । इससे कुछ अन्तर नहीं पड़ता । हमारी बाह्य दृष्टि होने से हम रूप के भ्रममें पड़े हुए हैं वरना पिता और पुत्र में भेद क्या है यदि बीज में और फली में भेद हो तो पिता और पुत्र में भी भेद हो सकता है अन्यथा यह बुद्धि का आवरण ही तो है । उस आनन्द के लिए बहुत देह धारियों ने समय समय पर घोषणा की है कि वह कहते हैं हमने इसको पालिया है और जो हमारी आज्ञानुकूल चलजायगा वह भी उसको प्राप्त कर लेगा । ऐसे देहधारी संसारी बन्धनों से बिलकुल स्वतन्त्र, देश, काल और जाति की दीवारों से न (बन्धे) हुए अपने अपने ढंग में पूर्ण विश्वास दिलाकर पथ प्रदर्शक की जुम्मेवारी लेकर बेधड़क

कहते सुनाई देते रहे हैं कि "आओ मेरा दामन पकड़लो मैं तुमको निजस्थान में पहुंचा दूंगा ''

इस शिक्षा को धर्म या दीन की शिक्षा का नाम दिया जाता है । इन सबका उद्देश्य समान ही होता है चाहे लक्ष्य और साधन में कितना ही भेद हो परन्तु इतना ही नहीं इसमें मुख्य साधन में भी कभी भेद नहीं होता वह अब भी है और भविष्य में भी रहेगा उसके बिना अन्य सब साधन बेकार हैं वह साधन है परम पावनी भक्ति । उस भक्ति की प्राप्ति श्रद्धा और विश्वास से होती है और श्रद्धा और विश्वास गुरु आचार्य व भगवान की दया से होता है । भगवान् शंकराचार्य जी कहते हैं —

मोक्षकारण सामग्र्यां भक्तिरेव गरीयसि ।

स्वयं आनन्दकन्द भगवान अपने प्यारे भक्त सखा अर्जुन को बड़े प्रेम से समझाते हैं ।

मन्मना भव मद्भक्तो मद्याजी मां नमस्कुरु ।
मामेवैष्यसि युक्त्वैवमात्मानं मत्परायणः ॥

मेरे मन वाला हो, मेरा भक्त बन, मुझ को नमस्कार कर, मुझको ही प्राप्त हो जायेगा । इस प्रकार अपने आप को मेरे परायण कर ।

जो भक्ति अनिवार्य साधन है उस भक्ति के बिना आत्मा का विकाश होना असम्भव है और उस के हो जाने से उस परम प्रिय प्रीतम का पाना ही नहीं, प्रत्येक अवस्था में, देश, काल की मर्यादा से ऊपर सब कालों और सब दशाओं में प्रत्यक्ष है । जैसा कि वह सब को मिला है । और तो क्या उसके लिए तो योनि का भी भेद नहीं है जैसा कि वह अपने भक्तों को मिला है ।

व्याधस्याचरणं ध्रुवस्य च वयो विद्या गजेन्द्रस्य का ।
कुब्जायाः किमु नामरूपमधिकं किं तत्सुदाम्नो धनं ॥
वंशः को विदुरस्य यादवपतेरुग्रस्य किं पौरुषं ।
भक्त्या तुष्यति केवलं न च गुणैर्भक्तिप्रियो माधवः ॥

ऐसी परं पावनी और सर्वव्यापिनी भक्ति की भक्ति करने के लिए भगवान की दया हुई है उस में हम आपको अपना भाई बनाना चाहते हैं उसी के लिए प्रार्थना करते है। । भगवान की भक्ति ही से बेड़ा पार होगा अन्य सब साधन तीनों कालों में बेकार हैं और कलियुग में तो एक मात्र भक्ति ही साधन है जैसा कहा है "कलौ तु केवला भक्तिः'' उस भक्ति के दो साधन बताए हैं भजन और सेवा जैसा "भज सेवायां भक्तिः'' उस कल्याणकारिणी भक्ति के लिये सूत्ररूप से कुछ पंक्तियां दी जाती हैं उन को हृदयङ्गं कर लीजिये । इन को बार बार पढ़िए और हो सके तो कंठस्थ कर लीजिए और फिर विचारपूर्वक इसके अनुसार आचरण कीजिये निश्चय आप भक्तिमार्ग की तरफ आएंगे और आपकी आत्मा का विकाश होगा और अन्त में आप निजानन्द को प्राप्त होंगे ।

भक्ति :—

भगवान् की प्राप्ति के लिए भक्ति ही एक मुख्य साधन माना गया है, और सब साधन गौण माने गए हैं । और वास्तविक देखा जाय तो विदित भी यही होता है कि जब तक आत्मा परमात्मा के साथ एक न हो जाय अर्थात् जब तक उसकी इच्छा के आधीन न हो जाय तब तक जीवन में कोई भी आनन्द नहीं । और अपनी वासना स्थूल हो या सूक्ष्म कोई भी नहीं रहनी चाहिए । केवल परमात्मा की इच्छा को परम इच्छा समझ कर उसको पालन करना और अपने मिथ्या अहंकार उसमें विस्मरण करना ही आन्त पद या मनुष्य जीवना का मुख्य उद्देश्य है । भगवत् को छोड़ किसी वस्तु का आश्रय न लेना परन्तु तन, मन और आत्मा को भगवत् से उत्पन्न हुए जान और उसी के आधार समझ उसी में लीन कर देना ही जीवन का लक्ष्य है । कोई कर्म करे वह भगवत् अर्पण हो, ऐसे भक्तियोग द्वारा व्यवहार और परमार्थ में कुछ अन्तर नहीं रहता । वह जीवन मुक्त हो जाता है ।